21वीं सदी की महती आवश्यकता : पर्यावरण लेखांकन

डॉ. आनंद तिवारी
विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग
शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

शोध समस्या का चयन :-

किसी भी देश की अर्थवस्था के विकास का पैमाना दो कारकों से सुनिश्चित होता है। पहला कारक आर्थिक विकास और दूसरा आर्थिक सवृद्धि है। वस्तुतः ये दोनो कारक एक दूसरे के पूरक है जहाँ तक आर्थिक विकास का प्रश्न है आर्थिक विकास के प्रमुख आयाम अधो-संरचनात्मक विकास,औद्योगिक विकास तथा व्यावसायिक वाणिज्यिक क्रियाकलापों के उन्नयन एवं गतिशीलता से है और आर्थिक संवृद्धि को आकलन के प्रमुख संकेतकों सकल राष्ट्रीय आय सकल राष्ट्रीय उत्पाद, शुद्ध राष्ट्रीय आय तथा प्रति व्यक्ति आय को आधार माना जाता है। विकास के इस मॉडल को सभी विकसित अर्थव्यवस्था ने आत्मसात एवं अंगीकार किया है और विसंदेह एवं निर्विवाद रूप से यह कहना प्रांसगिक होगा कि विकास तथा संवृद्धि ये पैमाने ही अर्थव्यस्था के मूल्यांकन के बुनियादी है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में विगत एक दशक में अधो संचनात्मक विकास के रूप में विद्युत क्षेत्र में परंपरागत ऊर्जा स्त्रोतों की बात करें चाहे हाइड्रोथर्मल या सौंर ऊर्जा की बात करें निसंदेह उत्पादन, तथा आधुनिकीकरण की दशा में विशेषकर ग्रामीण विद्युतीकरण के दिशा मे देश में प्रगति हुई है परिवहन के रूप मे 'सड़क परिवहन की दिशा में' राज्यीय, राष्ट्रीय राजमार्ग, अंतराज्यीय राज्यमार्ग को बिछाया गया है और रेल्वे क्षेत्र मे मेट्रों रेल्वे ने आम आदमी को सस्ता तथा आरामदेय सार्वजनिक परिवहन का साधन उपलब्ध कराया है दूरसंचार की दिशा में हमने सूचनाक्रांति के भारत में समूचे विश्व को एक घर बना दिया है डिजीटल पेमेन्ट ने कालाबाजारी को रोकने मे मदद की है। औद्योगिक वाणिज्यिक विकास को गतिशीलता प्रदान की है। आर्थिक संवृद्धि की गतिशीलता विकास का आधार मानी गई है परंतु आर्थिक संवृद्धि ने एक ओर पर्यावरणीय संकट का उत्पन्न किया गया है। वहीं दूसरी ओर आर्थिक बढ़ने से रोजगार में कोई वृद्धि नहीं हुई है, जो चिंताजनक पहलू है।

परंतु प्रश्न है कि क्या अर्थव्यवस्था का सर्वागीड़ संभावित तथा संघनित विकास के वर्तमान मॉडल से संभव है विकास की अवधारणा में समावेशी विकास, जिसमें समस्त अंतिम व्यक्ति को विकास प्रक्रिया में जोड़ने का प्रश्न आता है। समन्वित एवं एकीकृत विकास जिसमें क्षेत्रीय संतुलित विकास को जोड़ने की बात आती है। सतत विकास जो टिकाऊ व स्थायी विकास होता है तथा मानव संसाधन विकास जिसमें शिक्षा स्वास्थ्य, आवास, रोजगार की बात आती है पर विचार किया जाना चाहिए।

शोध परियोजना के उद्देश्य :

वर्तमान वाणिज्यिक एवं औद्योगिक गतिविधियों के कारण प्राकृतिक संसाधनों के अंतर्गत कोयला,गैस,तेल,लोहा एवं अन्य धातुओं के भंडारों का त्वरित गति से दोहन किया जा रहा है। जिससें पृथ्वी के गर्भ से इन भंडारों का

रिक्तीकरण होने से भविष्य में ऊर्जा संकट का उत्पादन करेगा, शोध परियोजना का उद्देश्य वैकल्पिक ऊर्जा संसाधनों के विकास के समुचित प्रयास से सम्बद्ध है।

1. बढ़ती आबादी आज संपूर्ण विश्व की अतिगंभीर और ज्वलंत समस्या बनती जा रही है मानव उत्पत्ति से लेकर 1830 तक मात्र एक अरब की आबादी थी परंतु इसके ठीक सौ वर्ष बाद 1930 में यह दो अरब हो गई 1960 में तीन अरब ओर 1970 में एक अरब और बढकर चार अरब और 2000 में 6 अरब हो गई है एशिया महाद्वीप में 60.52 प्रतिशत अफ्रीका महाद्वीप में 12.15 प्रतिशत यूरोप में 13.21 प्रतिशत आबादी है।

2. घरेलू व्यापारिक एवं औद्योगिक कार्यो, बढ़ती आबादी की, खाघान्न जरूरतों को पूरा करने के लिए वन क्षेत्र का कृषि भूमि में रूपांतरण तथा पशुओं के लिए चारागाह व नगरीकरण हेतु जंगलों को समाप्त किया गया, पृथ्वी के उद्भव के समय पृथ्वी का आधे से अधिक भाग वनाच्छादित था जो वर्तमान में घटकर 30 प्रतिशत रह गया है। विश्व उष्णकटिबंधीय वर्षा वाले वन 30 हैक्टेयर प्रति मिनित की तीव्र दर से नष्ट हो रहें है यदि इनके नष्ट होने की गति यही रही तो अगामी 30 वर्षो मे यह समाप्त हो जायेगे। वर्ष वाले वनों का विनाश अफ्रीका में 51.6 प्रतिशत,एशिया में 41.6 तथा दक्षिण अमेरिका में 37 प्रतिशत हो चुका है। भारत में विश्व की 15 प्रतिशत आबादी रहती है जबकि पृथ्वी का मात्र 2 प्रतिशत वन क्षेत्र भारत में है। भारत में वन विहीन क्षेत्र के निरंतर बढ़ने के कराण आज वियव में सर्वाधिक वर्षा वाला क्षेत्र चेरापूंजी भी बंजर होता जा रहा है राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार कुल भौगोलिक क्षेत्र का एक तिहाई भाग वनों से आच्छादित होना चाहिए जबकि वन क्षेत्र निरंतर घटता जा रहा है जिसके दुष्पारिणाम दृष्टिगोचर होने लगे है। जलवायू चक्र में असमानता, तापमान का बढ़ना, भूमि क्षरण तथा बाढ़ का आना आदि सामान्य समस्यायें हो गई है। शोध परियोजना का एक अन्य महत्वपूर्ण उद्देश्य वृक्षारोपण की दिशा में संघनित व पूर्ण इच्छाशक्ति से प्रयास किये जाने के लिए लागत निर्धारण से संबंधित भी है।

3. जल संसाधन की उपलब्धता संबंधी यूनेस्कों द्वारा प्रकाशित रिपार्ट के अनुसार पृथ्वी पर उपलब्ध कुल जल का 97 प्रतिशत महासागरों में उपलब्ध है यदि इस जल संपदा को पृथ्वी पर फैला दिया जाए लगभग तीन हजार मीटर मोटी परत बिछ जायेगी। समुद्र एक प्रकार से जल का कारखाना है जिसमें कभी बाढ नहीं आती और समुद्र कभी सूखते भी नहीं है परंतु समुद्र का जल खारा होने के कारण पीने योग्य नहीं होता ।

4. वर्तमान औद्योगिक एवं उपभोक्तावाद भूमिगत एवं सतही तल दोनों का अंधाधुन्ध व मनमाना प्रयोग होने से न केवल जल संचयन के परंपरागत स्त्रोंत्र नदी व तालाब सूखे गये है बल्कि भूमि जल के बढ़ते दोहन से भूमिगत जल स्तर निरंतर नीचे गिर रहा है यदि इस दिशा में समय रहते हुए उचित कदम नहीं उठाये गये तो अगली सदी में पेय जल सबसे गंभीरतम समस्या होगी यद्यपि पृथ्वी का एक बडा भाग पानी से आच्छादित है परंतु पेय जल केवल 2.5 प्रतिशत ही है प्रस्तावित शोध परियोजना का उद्देश्य जल पुनर्नवीनीकरण से सम्बद्ध है जिससे पेय जल संबंधी भावी चुनौतियों का सामना किया जा सके।

शोध परियोजना की परिकल्पनायें :

1. पर्यावरणीय वस्तुओं एवं सेवाओं की लागत का मापन करना।
2. पर्यावरणीय प्रभाव से मानवीय स्वास्थ्य, परिसंपत्ति और वस्तुओं पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।
3. वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण एवं मिट्टी प्रदूषण का अध्ययन कर उसके मापन का आधार सुनिश्चित करना।

4. वाणिज्यिक एवं औद्योगिक गतिविधि के कारण होने वाले पर्यावरणीय प्रदूषण के लिए दोषी व्यक्तियों एवं संस्थाओं का उत्तरदायित्व तय करना।
5. एक ऐसी संस्था के गठन का किया जाये खोजना जो कि प्रदूषण उत्पन्न होने के कारण से लेकर पर्यावरण लागत को वसूलने तक उत्तरदायित्व निर्धारित करें।
6. पर्यावरण लागत का प्रयोग पर्यावरण संरक्षण हेतु किस प्रकार किया जावे इस उद्देश्य हेतु सुझाव देना
7. पर्यावरण लेखाकन को लेखाकन की नवीन तकनीक का रूप देने हेतु गुणात्मक एवं परिणात्मक सांख्यिकी विधियों का प्रयोग करना।

शोध प्रविधि एवं अनुसंधान पद्धति :

पर्यावरण लागत लेखांकन एक विशद अध्ययन का विषय है शोध के अध्ययन के दो भाग होगें एक शाखा पर्यावरण से साबद्ध होगी और दूसरी शाखा लेखांकन से साबद्ध होगी। साहित्यक दृष्टि से पर्यावरण साहित्य से संबंधित विविध पहलुओं के सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक अध्ययन हेतु पुस्तकों, पत्रिकाओं एवं पाठ्यक्रम विषय सामग्री का शोध परक एवं वस्तु परक अध्ययन करना होगा। पर्यावरण लागत निर्धारित अर्थशास्त्र विषय का एक नया भाग हो सकता है शोध कार्य हेतु द्वितीय समंकों के संकलन हेतु पर्यावरण की दिशा में कार्यरत संस्थाओं से संपर्क किया जायेगा। पर्यावरण लागत के निर्धारण एवं उत्तरदायित्व निर्धारित करना शोध परियोजना का महत्वपूर्ण भाग होगा। इस हेतु पर्यावरण एवं लेखाकंन क्षेत्रों में पर्यावरण, लेखा वित्त, बैंकिंग, राजस्व आदि के विशेषज्ञों व संस्था प्रमुख, सरकारी, अर्द्धसरकारी व गैर सरकारी संस्थाओं के अधिशासी एवं प्रबंधक वर्ग से, पर्यावरण कार्य में समर्पित व्यक्तियों से व्यक्तिगत भेंट वार्ता एवं साक्षात्कार किया जायेगा। पर्यावरणीय पहलुओं एवं सेवाओं की लागत निर्धारित हेतु विभिन्न वर्ग समूहों से प्रश्नावली भरवायी जायेगी। राष्ट्रीय व राज्य स्तर के पुस्तकालयों से संदर्भित सामग्री के संकलन हेतु भ्रमण कार्य, शोध कार्य हेतु व्यय होगा। शोध की व्यवहारिक रूप देने के लिए सांख्यिकी एवं गुणात्मक तकनीकों का प्रयोग करना आवश्यक होगा।

अध्ययन एवं विश्लेषण :

सतत विकास की अवधारणा मूलतः इस तथ्य पर आधारित होती है वह प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग इस रूप में किया जाये ताकि इसका अधिकतम लाभ भावी पीढ़ियों को मिल सके। परंतु विकास की वर्तमान अवधारण में सकल राष्ट्रीय आय की संगणना में देश में उत्पादित वस्तुओं एवं सेवाओं के कुल मूल्य में भौतिक परिसंपत्तियों के अवमयण का समायोजन तो कर दिया जाता है परंतु प्राकृतिक संसाधनों के अवमयण का समायोजन पर विचार ही नहीं किया जाता है। कतिपय पहलू ऐसे है जिन पर विचार करना नितांत आवश्यक है।

1. पदार्थों का रिक्ततीकरण - औद्योगिक एवं अधोसरंचनात्मक विकास के कारण आधारभूत पूंजीगत एवं उपभोक्ता उद्योग की स्थापना तथा सड़क परिवहन को विस्तार मिला है परंतु इस खामियाजा प्रकृति को भुगतना पड़ रहा है। जिससे प्राकृति संसाधन के रूप में खनिज पदार्थों को प्रकति से उत्खनन हुआ है। वह चिंताजनक पहलू है।
2. वन क्षेत्र में कमी - सड़क परिवहन ने यातायात को सुगम वनाया है और परिवहन मार्ग बनाने पर्यटन हेतु उद्यानों की स्थापना करने तथा घरेलू एवं व्यावसायिक उद्देश्यों हेतु वनों को काटना किसके कारण है। वन क्षेत्र निरंतर कम हो रहे है।

3. भूमिगत जल एवं पेयजल संकट - कृषि की नवीन तकनीक के रूप में हरित क्रांति ने कृषि क्षेत्र में सिंचाई को बढ़ावा दिया है साथ ही औद्योगिक कार्यों हेतु पानी के निरंतर उपयोग होने तथा घरेलू विलासितापूर्ण जीवन हेतु घरेलू पानी का इस्तेमाल बढ़ने से भूमिगत एवं पेयजल संकट के साथ गहरा गया है। पानी के परंपरागत स्त्रोतों के रूप में तालाब, नदी, कुंए समाप्त प्राय स्थिति में आ गए हैं।

4. पास्थितिकीय असंतुलन - पदार्थों का निरंतर उत्खनन, वनों की अंधाधुंध कटाई जल प्रदूषण, मेट्रो के कारण महानगरीय क्षेत्रों में जमीन की खुदाई तथ कृषि औद्योगिक कार्यों में पानी के पानी का बढ़े प्रयोग तथ रासायनिक उर्वरकों के इस्तेमाल में जहां एक ओर वनस्पति, जलयी जीव,वन्य प्राणियों के जीवन के अस्तित्व का प्रश्न आमन्य हो गया है। वहीं मानवीय स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

5. उपभोग प्रवृत्ति आधारित अर्थव्यवस्था - अर्थव्यवस्था उपभोग प्रवृत्ति आधारित हो गई है। उपभोग प्रवृत्ति के अर्थव्यवस्था दुष्परिणाम 2008 में हम देख चुके हैं जिसके अमरीका जैसे देश को आर्थिक संकट का शिकार हो गया था। भारतीय अर्थव्यवस्था का बुनियादी आधार घरेलू बचत एवं कृषि अर्थव्यवस्था रही है।

सारांश :

प्रश्न यह है कि आर्थिक संवृद्धि के मापन राष्ट्रीय उत्पाद के स्थान पर सकल राष्ट्रीय प्रा.तिक उत्पाद के रूप में किया जाना चाहिए और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण हेतु पर्यावरण संरक्षण कोष बनाया जाना चाहिए। प्राकृतिक पदार्थों के उत्खनन करने वाले उद्योगपतियों, नदियों के पानी को प्रदूषित करने वाले व्यवसायियों प्रदूषण उत्पन्न करने वाले वाहन स्वामियों से कर वसूला जाना चाहिए। दोषी व्यक्तियों पर अर्थदंड आरोपित करना चाहिए और जीएसटी की भांति पर्यावरण का प्रावधान कर भी करना चाहिए और पर्यावरण कोष में जमा राशि से वृक्षारोपण, जल संरक्षण, वन्य प्राणी संरक्षण, जैसे कार्यों पर व्यय पर्यावरण संरक्षण को बढ़ाना देना चाहिए। और यह कार्य नियोजित तरीके से विचार जाना चाहिए। सड़क निर्माण हेतु जो वृक्ष काटे जाये खाली स्थानों में वृक्षारोपण किया जाये। इससे जहां एक ओर पर्यावरण संरक्षण होगा वहीं रोजगार की संभावनायें बढ़ सकेगी।

आज आवश्यकता इस बात के चिंतन की है विकास का कौन मॉडल अंगीकार किया जाये एक ओर एडम स्मिथ, राविन्स मार्शल जैसे अर्थशास्त्री हैं जो मानवीय कल्याण में अति उत्पादन एवं अति उपभोग प्रवृत्ति पर बल देते हैं तो दूसरी ओर भारतीय चिंतन मनीषी मेहता जैसे अर्थशास्त्रीय हैं जो आवश्यकताओं को सीमित करने पर बल देते हैं। आवश्यकता को सीमित करना संयम, मर्यादा, अनुशासन तथा अपरिग्रह के सिद्धांतों को मान्यता प्रदान करता है, जो गांधीवादी विचारधारा का बुनियाद आधार है। जिसको अंगीकार करने की आज महती आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. मिश्र एवं पुरी भारतीय अर्थव्यवस्था 2019
2. दत्त एवं सुंदरम् भारतीय अर्थशास्त्र 2019
3. अग्रवाल ए.एन.भारतीय अर्थव्यवस्था 2019
4. दासः पर्यावरण लेखाकंन
5. आईसीडब्लयू ए. पर्यावरण अंकेक्षण
6. यू.एस.डी.पी. रिर्पोट 2018